आन्ध्र

आचार्य रायप्रोलु कृत

अनुवादक

आर.

तृणकंकण

आदरणीय
कलाप्रपूर्ण डॉ॰ आचार्य
रायप्रोलु सुब्बाराव
को
सादर
रा शंकरय्या शास्त्री
6/10/8

मूल

आचार्य रायप्रोलु सुब्बाराव

अनुवादक

साहित्य वाचस्पति राचोटि शंकरय्या शास्त्री

अध्यक्ष

हिन्दी विभाग
गवर्नमेंट सिटी कालेज
हैदराबाद-500002

चित्रकार

श्री बी॰ पी॰ राजु

प्रकाशक

आ॰ सी॰ कला प्रकाशन
2-1-426, नल्लाकुंटा,
हैदराबाद-500 044
आं॰ प्र॰

'Trinakankana' a poetical work by Sahitya Vachaspati Rachoti Sankaraiah Sastry, M. A., B Ed Head Department of Hindi Government City College, Hyderabad A. P. dedicated to his parents Late Smt. Nagamamba and Sri Adivaiah.

Cover design by Sri B P. Raju, published by R. C. Kalaprakasan, 2-1-426, Nallakunta, Hyderabad-500 044 A. p, July 1981, price Rs. 12-00

मूल्य	बारह रुपये
संस्करण	प्रथम संस्करण, जुलाई, 1981
मूल लेखक	आचार्य डा० रायप्रोलु सुब्बाराव
अनुवादक	आर० शंकर शास्त्री
	अध्यक्ष, हिन्दी विभाग,
	गवर्नमेंट सिटी कालेज, हैदराबाद-2
आवरण	बी० पी० राजु
प्रकाशक	आर० सी० कला प्रकाशन, सर्वाधिकार प्रकाशक को प्राप्त।
तथा	2-1-426, नल्लाकुंटा,
प्राप्ति स्थान	हैदराबाद-500 004, आं० प्र०
मुद्रक	दक्षिण भारत प्रेस, खैरताबाद, हैदराबाद-500 004.

'तृणकंकण' के प्रणेता

तेलुगु राष्ट्रीयता के वैतालिक

'कलाप्रपूर्ण' डा. आचार्य रायप्रोलु सुब्बाराव

जन्म दिनांक 1१–१–1892

विषय—सूची

क्र.सं.	पाठ	लेखक का नाम	पृष्ट संख्या
1.	लेखक का परिचय	साहित्य वाचस्पति रारोटि शंकरय्या शास्त्री, अध्यक्ष हिन्दी विभाग, गवर्नमेंट सिटी कालेज, हैदराबाद.	III
2	रचनाएँ प्रकशित	,,	IV
3.	अप्रकाशित	,,	V
4.	कृति समर्पण	माता-पिता को	VI
5.	वंशावली	लेखक की	VI-VII
6.	प्राक्कथन	डा. भीमसेन निर्मल रीडर, हिन्दी विभाग, उ वि.वि.हैदराबाद.	VIII-X
7	दो शब्द	साहित्य वाचस्पति राचोटि शंकरय्या शास्त्री.	XI-XIV
8	आशंसा	डा. वै. वेंकट रमणराव, रीडर, हिन्दी विभाग,हैदराबाद विश्वविद्यालय, हैदराबाद.	XV-XVII
9.	बधाई	डा. के. वी सुन्दराचार्य प्राध्यापक, प्राच्य महाविद्यालय हैदराबाद, आन्ध्र सारस्वत परिषद	XVIII-XIX
10	अनमति	डा. आचार्य रायप्रोलु सुब्बाराव	1
11.	साधुवाद	डा. दाशरथि (आस्थान कवि)	2
12.	सम्मति	डा. दिवाकर्ल वेंकटावधानी भू. पू आचार्य एवं अध्यक्ष तेलुगु विभाग, उस्मानिया विश्व विद्यालय, हैदराबाद.	3
13.	सम्मति	श्री एन कृष्णमूर्ति,प्राचार्य सिटी कालेज,है.	4
14.	सम्मति	पं. भीष्मदेव शास्त्री,साहित्य वाचस्पति	5-6

15.	सम्मति	मान्य श्री देवुलपल्लि रामानुजराव उपाध्यक्ष, आंध्र सारस्वत परिषद तथा आंध्र प्रदेश साहित्य अकादमी, है.	7-8
16	सम्मति	डा. आर्येन्द्र शर्मा, भू. पू प्राचार्य एव अध्यक्ष सस्कृत विभाग तथा डीन आफ आर्टस, उ. वि. उस्मानिया विश्वविद्यालय, हैदराबाद.	8-9
17.	सम्मति	शिरोमणि कप्पगतुल लक्ष्मण शास्त्री, उपनिदेशक-शिक्षा विभाग आ. प्र. है	9
18	सम्मति	डा. कृष्णस्वामी अय्यगार, रीडर हिन्दी विभाग, केन्द्रीय हिन्दी सस्थान, आगरा	10
19	स्वस्त्ययन	डा रामनिरजन पाण्डेय, भू. पू आचार्य एव अध्यक्ष हिन्दी विभाग, उ. वि वि. है.	10 12
20	सम्मति	ओम प्रकाश निर्मल, उपसपादक	13
21	सम्मति	श्री डी. नटेशन, एम ए, एम. एस. सी. प्राचार्य गवर्नमेंट सिटी कालेज, हैदराबाद.	13
22.	सम्मति	डा. वानमामलाई वरदाचार्युलु, भू पू. एम. एल. सी. आ प्र.	13
23.	सम्मति	शिरोमणि के. वी. अप्पलाचार्युलु गुम्मडिदल (मेदक)	13–14
24.	सम्मति	डा. आनन्द प्रकाश दीक्षित, आचार्य एव अध्यक्ष हिन्दी विभाग-पुणे विद्यापीठ, गणेशखिण्ड, पुणे ४११ ००७ (महाराष्ट्र)	14–15
25	भूमिका	डा चन्द्रभानरावत, आचार्य एव अध्यक्ष हिन्दी विभाग, हैदराबाद विश्वविद्यालय-है.	16
26	'नयी कविता' 'तृणककण'	साहित्य वाचस्पति राचाटि शकरय्या शास्त्री, अध्यक्ष हिन्दी विभाग, गवर्नमेंट सिटी कालेज, हैदराबाद.	

साहित्य वाचस्पति राचोटि शंकरय्या शास्त्री

अध्यक्ष

हिन्दी विभाग

गवर्नमेंन्ट सिटी कालेज, हैदराबाद-500002

(आन्ध्र प्रदेश)

जन्म दिनांक तथा स्थान : 15-7-1932 मगपेट (मेदक) आ० प्र०

पठित भाषाएँ : तेलुगु, संस्कृत, हिन्दी, उर्दू, मराठी तथा अंग्रेजी

सौक्षिक योग्यताएँ : विद्वान्, वाचस्पति, साहित्यालकार, शास्त्री,
संस्कृत भाषा विशारद, एम. ए. आदि
अध्यापक प्रशिक्षण, हिन्दी शिक्षक तथा बी एड.

कार्यकाल : लगभग 31 वर्ष कालेजीय 1/ वर्ष

रचनाएँ

प्रकाशित :-

1. तेलुगु भाषा स्वबोधिनी (हिन्दी के माध्यम से)
   आन्ध्र सारस्वत परिषद, हैदराबाद-500001. 1966.
2. 'पूर्णम्मा' गुरजाडा अप्पाराव का हिन्दी काव्यानुवाद
3. 'जन्म भूमि' आचार्य रायप्रोलु सुब्बाराव का हिन्दी काव्यानुवाद
4. 'अंधकार से युद्ध' डा० दाशरथि (आस्थान कवि आ. प्र.)
   हिन्दी काव्यानुवाद
5. 'सुमित्रानदन पत' उर्दू सियासत 1978
6. 'हिन्दी की और क्या विशषता होनी चाहिए' ? आन्ध्र प्रदेश
   नवम्बर-दिसबर 1979
7. 'भाषा और व्याकरण' 'पूर्णकुंभ' दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा
   खैरताबाद-4
8. 'तृणकंकण आचार्य डा रायप्रोलु सुब्बाराव, हिन्दी काव्यानुवाद
   जुलाई 1981
9. 'झासी की रानी' सुभद्र कुमारी चौहान-तेलुगु काव्यानुवाद-1981.

अप्रकाशित

1. 'हिन्दी-तेलुगू की काव्यय सरचना' आग्रा 1971
2. 'रुक्मिणी का पाणिग्रहण' महाकवि भक्त पोनना का हिन्दी काव्यानुवाद
3. 'मनाचे श्लोक' मराठी तेलुग् अनुवाद (काव्य) समर्थदास
4. 'भर्तृहरि सुभाषित' हिन्दी काव्यानुवाद
5. 'सुन्दर काण्ड' सत महाकवि तुलसीदास
6. 'शतरूपा' श्री उत्पला हिन्दी काव्यानुवाद
7. 'श्रीकृष्ण सदेश' श्रीमद् महाभारत हिन्दी काव्यानुवाद
8. 'शंकर सुधा' नीति के दोहे

कृति समर्पण

श्री सपन्न विद्याधर-जन बहु मगपेट।
पुराण भजन चलते थ-लाग प्रसन्न सुपेट॥
मा नागमाबा शीला-पिता अडिवय्यशील।
शकर शोभे समर्पित-'तृणककण धन शील॥

वंशावली

मगपेट मेदक स्थित—चनली प्रजा प्रधान
वही जन्म भूमि मेरी—प्रिय दर्शिनी सुजान
देश भवन के वश मे—जिसका होत सुजात।
वह हेता सस्कार वश—अतीव ही निष्णात॥
वीरन्न ईश के भक्त—अडिवय्य ज्येष्ठ पुत्र।
गुणवान मुद्दीमन श्रेय— शकर जिनका पुत्र॥
प्राथमिक शिक्षा स्वग्राम—चौथी कक्षा पास।
उस बीच डबल प्रमोशन—एच. एस. सी मे पास॥

अन्वारुल उलूमकी सीख—चादर घाट विकाश ।
विवश पढ़ाई को त्यजा—टीचर बना स्वदेश ।।
शास्त्री विद्वान प्रवीण—अलंकार प्रिय मान ।
एम. ए , बो. एड. सुजन—वाचस्पति बुध जान ।।
चन्द्रकला जाया सुतनु—पुत्र-पुत्री विनीत ।
धर्म परायण शील युत—जीवन पावन प्रीत ।।
सूमति विजयेन्द्र तथा रवि—शाभाशीला शान ।
पुत्र-पुत्री विमल खान—होवे जगत सुजान ।।
महादेव सोम शकर—मम जामाता जान ।
चमके सहर्ष सुधा निधि—वे हो शास्त्र निधान ।।
हे ! दयामय ईश ! मुझे—निहारे भक्त प्रीति ।
सपत्ति मैं सभी निकट—विप्रत्ति मै दुख प्रीति ।।
विजया बहू पुत्रवती--आदित्य पौत्र मान ।
स्वीकारे मेरी विनय--सुख शांति तोष पान ।।
विद्वानो के सुस्नेही--शकर सुमन सुजान ।
मैं चाहता ज्ञान सुधा—दुख भंजक भगवान ।।
जन सेवा ही आनंद--शंकर प्रीति प्रकाश ।
अभिमान न हो सतोष--जन-मन ज्योति प्रकाश ।।
मैं ने रचा 'तृणकंकण'--हिन्दी की दृग ज्योति ।
आचार्य रायप्रोलु का--पाठक दें सप्रीति ।।

प्राक्कथन

आचार्य रायप्रोलु और 'तृणकंकण' का नाम सुनते ही तेलुगु भाव कविता का स्मरण हो जाता है। तेलुगु साहित्य में भाव कविता का जो स्थान है वही स्थान हिन्दी मे छायावादी कविता का है। उसके आदिकवि हैं श्रीरायप्रोलु। तेलुगु भाव कविता तथा उसके काव्यदर्शन के लिए 'अमलित शृंगार तत्व' रायप्रोल की अपूर्व देन है। यह तत्व सर्वप्रथम 'तृणकंकण' में ही प्रतिपादित हुआ था। तत्पश्चात उन्होंने उसे 'रूपनवनीत' नामक रूपक में सिद्धात के रूप में प्रतिपादित किया है। इस प्रकार तेलुगु सांप्रतिक साहित्यिक काव्यधारा में 'तृणककण' का अपना विशिष्ट स्थान है।

रायप्रोलु की रचना प्रक्रिया पश्चिमी विचारधारा से अत्यधिक प्रभावित रहते हुए भी उसकी आधारशिला भारतीय संस्कृति से असपृक्त नही है। उन्ही के शब्दो में "अग्रेजी की सरस रचनाओ में लिरिक (गीति) संप्रदाय एक है। उसी को तेलुगु में लाने का मैंने भरसक प्रयत्न किया है। उसीका सुन्दर परिणाम है यह 'तृणककण'।

'तृणकंकण' की कथा छोटी सी है पर उसका सार अतीव गभीर है। इस लघुकाव्य में बाह्य की अपेक्षा अन्तस के चित्रण को अपेक्षाकृत अधिक महत्व दिया गया है। इसमें वाच्य की अपेक्षा व्यजना की प्रधानता है और भावात्मक योग साधना का प्रतिपादन किया गया है। 'तृणककण' विषयवासनाओ से परे रहकर विश्वप्रेम के सार्थक स्वरूप को प्रदर्शित करता है। इसे राचोटि शकरय्या शास्त्री ने काव्य रूपान्तरित किया है। इनका यह प्रशंसनीय कार्य है।

मंगपेट (मेदक) के निवासी श्री राचोटि शंकरय्या शास्त्री सधे हुए लेखक तथा कवि हैं। ये तेलुगु, संस्कृत, हिन्दी, उर्दू तथा अंग्रेज़ी के विद्वान हैं। कविता लिखने के प्रति आरभ से ही इनकी रूचि रही है। श्री शास्त्री की अनेक मौलिक रचनाएँ यत्र-तत्र प्रकाशित होती रहती है। अनवाद के क्षेत्र मे इन्होने सराहनीय कार्य किया है। हिन्दी के माध्यम से तेलुगु सीखने के लिए श्री शास्त्री ने एक पुस्तक की रचना की थी जिसका उत्तर भारत के लोगो ने सहर्ष स्वागत किया है। श्री शास्त्री से हिन्दी तथा तेलुगु साहित्य को और भी बड़ी-बड़ी आशाएँ है।

मुझे पूर्ण विश्वास है कि 'तृणकंकण' का प्रस्तुत काव्यानुवाद काव्य प्रेमियो को तेलुगु भाव कविता की सरसधारा मे अवगाहन करने का सुअवसर प्रदान करेगा। इस सुन्दर प्रतिभावान साहित्यिक कार्य के लिए मैं अपनी ओर से शास्त्रीजी को साधुवाद एव बधाई देता हूँ।

इनकी अनुवादशैली की सरसता को समझने के लिए निम्न-लिखित उदाहरण पर्याप्त है :--

तेलुगु मूल :--

"ई तृणकंकणबु भरियिंपुम नी मणिबंधमंदु स
प्रीतिनि नप्पुडप्पुडु वलपिपुल नेय्यमु ज्ञप्ति गोन्न ब्रा
भातिक वेळ नी प्रणय बाष्प कणाजलिनितयिच्चिये
रीतिनि वाडकुड नलरिपुमिदे, तुदि वांछ सोदरी !"

हिन्दी अनुवाद :--

"पहनो, यह "तृणकंकण" अयि प्रिये ! अपने मणिबंध में
बड़े प्रेम से जब कभी मेरा मृदुलमय स्नेह याद आये
प्राभातिक वेला में प्रणय अश्रुजल को छिड़क
किसी प्रकार वह कुम्हला न जाये पुष्पित रहे
यही मेरी अतिम इच्छा है सहोदरी !"

अन्य छन्दो की भाँति इसमें भी लय की प्रधानता है। विषय वासना के स्थान पर सहोदरी का भाव प्रस्फुटित हुआ है। इसमे दैहिक सयोग की अपेक्षा मानसिक संयोग पर ही अधिक जोर दिया गया है। अश्रु-जल के प्रवाह से मन की मलिनता घुलकर अमलिनता का प्रादुर्भाव हो जाता है। उसे छिड़ककर उसको सदा सरसब्ज शादाब रखने की अतिम इच्छा प्रकट की जाती है। उमंग भरे शब्दो में वह उसे सहोदरी के नाम से सम्बोधित करता है तथा उल्लसित हो सानद उसे "तृणककण" पहनाता है। अत: 'तृणककण' शाश्वत प्रेम सूत्र के पवित्र बन्धन को व्यक्त करनेवाला खण्ड काव्य है।

27-8-1981

गान्धीनगर

हैदराबाद-500380

—डा० भीमसेन निर्मल

रीडर, हिन्दी विभाग,

उस्मानिया विश्वविद्यालय,

हैदराबाद-500007

दो शब्द

उस्मानिया विश्वविद्यालय के भूतपूर्व तेलुगु विभाग के प्रथमाध्यक्ष आचार्य रायप्रोलु सुब्बाराव के 'तृणकंकण' को हिन्दी मे रूपांतरित करने की मुझे पहले से ही बडी इच्छा थी। वह आज साकार रूप को ग्रहण करने जा रहा है। इसमे मेरे और मूल लेखक के विचारो में बहुत कुछ भाव साम्यता पायी गयी। यह सच है कि सक्षम भावुक कवि ही सदा मूल रचयिता के रग में और रंग भर देता है।

इस रचना मे भारतीय सस्कृति का समुचित समावेश हुआ है। इस खण्ड काव्य का युवक सतप्त है दुःखी है। युवती युवक को मानसिक संतोष प्रदान करने का भरसक प्रयत्न करती है। अत में वह विजय पाती है। इसमे 'अमलिन शृंगार तत्त्व' की छटा देखते ही बनती है। काव्य में कही भी युवती युवक का नाम नही लिया गया।

ज्ञानवृद्ध वयोवृद्ध रायप्रोलु साप्रतिक तेलुगु छायावादी युग एवं राष्ट्रीयता के प्रेरणा-स्रोत महाकवि हैं। इनकी भाषा में सरलता, गंभीरता तथा भाव गरिमा की ज्योति अपने आप झलकती है। इसमें ठेठ तेलुगु के शब्द प्रयोग किये गये है। उस्मानिया विश्वविद्यालय के तेलुगु विभाग के आचार्य डा॰ सी॰ नारायण रेड्डी ने अपने पी-एच. डी. के शोध प्रबध मे रायप्रोलु को गुरजाडा के साथ साथ युग पुरुष माना है।

बीसवी सदी के दूसरे दशक में जो कविता 'अभिनव कविता या नयी कविता' कहलाती थी। वही आज भाव कविता के नाम से अधिक विख्यात है। जैसे जैसे समय बदलता जाता है वैसे वैसे विचारो में

परिवर्तन आही जाता है। विचारों के परिवर्तन से मानव की संस्कृति बदल जाती है। सस्कृति के बदलने से देश की विशिष्टता ही नष्ट हो जाती है।

'तृणककण' का काव्य हिन्दी के छायावादी महान कवि 'सुमित्रा नन्दन पत' की 'ग्रथि' नामक काव्य से मिलता जुलता है। इससे उत्तर तथा दक्षिण का भेद मिट सा जाता है। इस खण्ड काव्य में प्रेम की त्रिवेणी बहायी गयी है। इसका अवगाहन वाछनीय है।

जिन-जिन महानुभावो ने अपनी अमूल्य सम्पत्ति प्रदान की है उन्हे मेरा हार्दिक धन्यवाद ।

कलाप्रपूर्ण आचार्य डा० रायप्रोल सुब्बाराव, डी० लिट्० ने सहर्ष मुझ अवुवादक को इस 'तृणककण' के हिन्दी अनुवाद को छपाने तथा बेचने के सर्वाधिकार सौंप दिया है। एतदर्थ उन्हे मेरा हार्दिक धन्यवाद। मैं ने उन अधिकारो को आर० सी० कला प्रकाशन के सुपुर्द किया है।

डा० इरिवेटि कृष्ण मूर्ति, रीडर तेलुगु विभाग उस्मानिया विश्व-विद्यालय तथा आन्ध्र प्रदेश साहित्य अकादमी के मन्त्री भी है जिन्हो ने अकादमी की ओर से आर्थिक सहायता करवाई। एतदर्थ उनको मेरा हृदयपूर्वक धन्यवाद। डा० भीमसेन 'निर्मल', रीडर हिन्दी विभाग उस्मानिया विश्वविद्यालय तथा अकादमी के सदस्य एव मेरे पी-एच०डी० के पथप्रदर्शक भी हैं जिन के आशीर्वाद के बिना यह काम मेरे लिए असभव सा था। इसलिए उन्हे मेरा हार्दिक अभिनदन।

चि० गदे सोमशकर, बी० काम० ताडूर, श्री टी० श्रीरामुलु, बी० ए०, बी० एड० श्रीयुत सिद्दसेट्टि ईश्वरय्या का भी मैं आभार मानता हूँ कि जिन्होने समय पर मेरी यथोचित सहायता की।

आचार्य डा० कोत्तपल्लि वीरभद्रराव, डीन ऑफ सोशियल साइ-न्सेस हैदराबाद विश्वविद्यालय, प्राचाय श्री डी० विश्वनाथम्, गवर्नमेंट

कालेज, गढवाल-आ. प्र. तथा विद्वान कवि श्री उत्पला ने अनुवाद की भूरि भूरि प्रशसा की ।

मेरे हितैषी सर्वश्री भू० पू० कांग्रेस के अध्यक्ष तथा एम०एल०ए० श्री कात्तूरी सातथ्या गुप्त, सि० शास्त्री, श्रीमान वी० पी० राघवाचार्य, भू पू. एम. एल. सी. तथा उस्मानिया विश्व विद्यालय के वरिष्ठ सिंडिकेट के मेंबर, मेरे गुरु श्री कृष्णदत्त भू. पू. प्राचार्य, हिन्दी आर्टस् कालेज, विद्यानगर हैदराबाद, वैद्य तुलजाराम शास्त्री, आदर्श औषधालय, फालखाना, हैदराबाद, श्रीमान पी. तिरुमल राव रिटायर्ड प्राध्यापक, आन्ध्र सारस्वत परिषत्, हैदराबाद, एस. बी. जोशी, बी. ए., एम. ए., एल. एल. बी. अडवाकेट, प्रो. डा. सी बी प्रकाशराव, एम. एस. सरजन उस्मानिया अस्पताल, हैदराबाद, डा. बालकिष्टय्या, एम. बी. बी. एस. वनपर्ती, कांति चद्र, हिंदी प्राध्यापक, एन. पानय्या चौधरी, हिंदी प्राध्यापक खम्मम, डा. विजयवीर विद्यालकार, डा. एन. पी, कुट्टन पिलै, डा. नागेश्वर राव, डा. बी. सायिलु तथा डा. एम. रगय्या, प्राध्यापक सिटी कालेज जिन्हो ने इस पुस्तक के प्रकाशन के लिए बार-बार मुझ प्रेरणा प्रदान करते रहे एतदर्थ उन्हे मेरा हार्दिक अभिनदन।

मुख पृष्ठ के चित्रकार श्री बी. पी. राजु का भी मैं अभिनदन करता हूँ कि जिन्हो ने सुन्दर चित्र बनाकर देने में मेरी बड़ी मदद की ।

दक्षिण भारत प्रेस के अध्यक्ष तथा उनके सहयोगी वर्ग का भी मैं हृदयपूर्वक कृतज्ञ हूँ कि जिन्होने मेरी विवशता का विचार कर के इसे सुन्दर रूप में प्रकाशित करने की व्यवस्था की ।

अत मे अ र, सी. कला प्रकाशन का भी मैं हृदय से आभार मानता हूँ कि समय पर मेरे हाथ बटाकर मेरे उत्साह को द्विगुण कर समुचित सहायता की ।

आखिरकार उस दयामय ईश्वर से मेरी सविनय प्रार्थना कि :—

मंगलमय भगवान विष्णु हैं मंगलरूप महेश
मंगलरूप विरंचिपितामह मंगलरूप स्वदेश
आदि मध्य अवसान सभी में मंगल हो परिपूर्ण
निश्चित प्रेय श्रेय सम्पादन विघ्न सकल संचूर्ण
सकल कला संकलित सुधीजन रसमय वाणी विज्ञ
'तृणकण' क्षण-क्षण अवलोके धन्य भाग यह अज्ञ

—साहित्य वाचस्पति शाचोटि शंकरय्या शास्त्री

अध्यक्ष

हिन्दी विभाग
गवर्नमेंट सिटी कालेज,
हैदराबाद-500 002
आं. प्र.

—o—

आशंसा

काव्यानुवाद एक ऐसी सृजनात्मक प्रक्रिया है जिसमें अनुवादक को अनेक सीमाओ मे बन्धकर कर्तव्य का पालन करना पड़ता है। यह प्रक्रिया उस सदर्भ मे और जटिल हो जाती है जहाँ आधारभूत काव्य आख्यानात्मक वस्तु से मुक्त होकर अन्तरंग की भावलहरियो से तरंगाइत हो उठता है। प्रस्तुत खण्डकाव्य 'तृणकङ्कण' तेलुगु की स्वच्छन्दवादी परंपरा के प्रवर्तक आचार्य रायप्रोलु सुब्बाराव की वह प्रथम रचना है जो 'The Telugu School of Romantic Revival' और कालिदासकृत नाटक त्रय की भाववाहिनियों का संगम है। हिन्दी छायावादी कविता में जो अमलिन शृंगार अथवा वासनारहित प्रेम का भव्य रूप अवतरित किया गया है, वह उसी रूप में तेलुगु भाव कविता मे भी प्रसारित है। इसको अवतरित करने का श्रेय श्री सुब्बारावजी को है और तेलगु में 'तृणकङ्कणमु' इस दिशा में आदि रचना है। इसमें प्रेम का तात्विक रूप विवेचित है। यह अमलिन प्रेम 'अस्खलित प्रणयानुरक्ति' है जो अनंत तपस्या के बिना प्राप्त नहीं होता। रायप्रोलुजी ने इस भावना को निम्न छन्द में इस प्रकार व्यक्त किया है :--

'दैविकं बगु सुकृति दक्क नवनि
जतल प्रेमोदयंबु संगतमु कादु,
अदुनस्खलित प्रणयानुरक्ति
चिरतपश्शुद्धि चे गानि दोरक बोदु।'

इस भावना की अनुवादाभिव्यक्ति मूलानुरूप ही है :-

"दैवी सुकृति बिना इस अवनी पर
युगल प्रेमोदय असगत ही

उसमें अस्खलित प्रणयानुरक्ति
चिर तपश्शुद्धि से ही प्राप्त होती ।

अनुवादक अपने प्रयास मे सफल हुए हैं। उनकी प्रतिभा उन सदर्भो मे और व्यक्त हुई है जहाँ तेलुगु के सामान्य व्यावहारिक शब्दों का हिन्दी मे सस्कृत निष्ठ शब्दो मे रखकर छायावादी भाषा रूप के निकट उतारने का प्रयास किया गया है। इस प्रयत्न के अनेक उदाहरणो में एक :—

मूल :--संदे मसलिनकोलदि ब्रशांत मगुचु
जलुवयुनु माद्यमु दन्नु नलमि कोनग,
द्रोव सोलिपु लेडल ब्रदोष पवन
मल्ल नल्लन वीचे ना यबलमीद ।

अनु :—प्रशात चित्त सन्ध्या स्निग्ध थी
मद शीतलता भी तत्र व्याप्त थी
पथ पर चलता प्रदोष पवन
धीरे-धीरे प्रवाहित तरुणी पर ।"

'तृणकङ्कण' की रचना तेलुगु के देशी छन्दो और सस्कृत के वृत्तो मे की गयी है। अनुवादक ने हिन्दी छायावादी प्रवृत्ति के अनुसार मुक्तक और मात्रा छन्दो को ग्रहण करके भावाभिव्यक्ति में प्राणतत्व जोडने का सफल प्रयास किया है। उदाहरणार्थ इस छन्द को लीजिए जिसमें अमलिन प्रेम का महत्व गाया गया है।

"मन से वाणी से कम से
कलुषित होगी इस पृथ्वो पे
प्रेम की लीलाएँ;
तप से, सहन से, ध्यान मे
रत होने पर भी प्रेम ऐक्य
को प्रदान करता ।"

यह तेलुगु में छन्दोबद्ध रूप मे व्यक्त हुआ है और अनुवादक ने मुक्तक छन्द मे अपनी सफलता प्राप्त की है।

प्रशसा से बचकर एक बात यहाँ उल्लेखनीय है कि अनुवादक को लोकप्रचलित शब्दो और शब्दबिम्बो को अनुवाद करने में कठिनाइयो का सामना करना पडा है, जो स्वाभाविक है।

इस नवसृजन के लिए मेरी आशसा है कि भगवान शास्त्रीजी की प्रतिभा को उत्तरोत्तर और सम्पन्न करे और तेलुगु के अनमोल रत्नो को हिन्दी ससार के समक्ष रखने की सतत प्रेरणा प्रदान करते रहे।

"उपजत अनत अनज छवि लहहि।"

डा० वै० वेकटरमणराव
एम० ए० (हिन्दी)०, एम० ए० (तेलुगु), पी.एच डी.
रीडर, हिन्दी विभाग
हैदराबाद विश्वविद्यालय
गोल्डन थ्रेशोल्ड'
नामपल्ली स्टेशन रोड,
हैदराबाद-500001

बधाई

श्री राचोटी शकरय्या जी शास्त्री तेलुगु, हिन्दी भाषाओ के साथ साथ सस्कृत, उर्दू के विद्वान भी हाने के नाते उनके लिए अनुवाद का कार्य क्रीडा-सा बन गया है। 'तृणकङ्कण' की रचना होकर 70 वर्ष की अवधि बीत चुकी है। फिर भी उसका स्थान उसे प्राप्त है। अनुवादक की शैली अतीव सुन्दर है, सरल है। कवित्रयो ने भी ऐसा ही कार्य किया है। हिन्दी 'तृणकङ्क' को मैंने आदि से अत तक पढा है। आनद का अनुभव किया है। शास्त्री जी ने इसमे सारस्वतिक सफलता पायी है। काव्य के आरभ में कवि ने नायिका का वर्णन किस प्रकार किया है जरा तो निहारिये।

तेलुगु मूल :—

'कन्ने गेदगि चेडुना गलुकु लोलयु
ना वेलदि योडल् नग लेवि लेक,
जारु चेम्मट मुत्याल जंपु सरुल
सहज सौन्दर्यमुनु वेद जल्लु चुडे।'

हिन्दी अनुवाद :

"सुन्दर केतकी गुच्छ सम सौन्दर्य निखरता
कान्त-काया उसके बिना आभूषणो के
स्रस्त स्वेद मुक्ताहार गुच्छ सहज
सौन्दर्य को चारो ओर बिखेरता।"

'गेंदगी चडुको' 'केतकी गुच्छ', 'जारु चेम्मट', को 'स्रस्त स्वेद', 'मुत्याल जपु सरुल' को 'मुक्ताहार गुच्छ के तौर पर अनूदित करना

पाठकों को निकटता से मूल लेखक का परिचय कराना ही है। एतदर्थ शास्त्रीजी को मैं हृदयपूर्वक बधाई देता हूँ। उस्मानिया विश्व-विद्यालय के हिन्दी विभाग की पाठ्य-पुस्तक मण्डली इस पुस्तक को एम ए. के पाठ्यक्रम में समुचित स्थान दिलाने का प्रयास करेगी।

डा० के. वी. सुन्दराचार्य
प्राध्यापक
आन्ध्र सारस्वत परिषद्
प्राच्यमहाविद्यालय
तिलक रोड़, हैदराबाद-500001

विद्वन्नीति

—भर्तृहरि

अलकार न मानव को मुक्ता स्वर्ण न शान।
भूषण नही केश कुसुम, कोमल सुगध स्नान ॥
पवित्र वचन नर भूषण, वाणी सदलकार।
निरर्थ अन्य आभूषण, नर बुध सालंकार ॥

शिक्षा मनुज रूप अधिक, शोभे सुवित्त गुप्त।
शिक्षा ही सुख कीर्ति है, शिक्षा गुरु-गुरु आप्त ॥
शिक्षा बधु विदेश में, शिक्षा ही गुरु तुल्य।
शिक्षा आदृत सम्राट, सीख शून्य पशु तुल्य ॥

चोर चुरा नही सकता, सदा सुख शांति देत।
शाश्वत यश प्रमोद सुधा, विद्या बांटे प्रीत ॥
वर्द्धित होवे दिनों-दिन, हो न नष्ट प्रलयात।
नृप विसर्जे गर्व सदा, विद्याप्रेमी प्रांत ॥

मूर्खनीति

समझता गजसम मदान्ध, जब कुछ जाने नाहि।
बैठा जब सगर्व संघ चूर्ण सुपडित माहि ॥
जब कुछ ज्ञेय विज्ञोसे, मूर्खवत रहा मौन।
दूर तभी नितांत गर्व, पंडित सुजान लौन ॥

अनु. —आर. एस. शास्त्री

"Kala Prapurna"
Rayaprolu Subba Rao. D. Litt

'Lalitha Kuteer'
44, Nehru Nagar,
Secunderabad-500 326

Date : 12-9-1979

I am, hereby giving permission to translate into Hindi print and sell my 'Thrinakankanmu' the first original poems in New poetry in Telugu to Sri Sankarayya Sastry, M. A. Head of the Hindi Department, Government City College, Hyderabad

He has read the translation to me and I am pleased

--R. Subba Rao

साधुवाद

तेलुगु छायावादी युग के प्रथम प्रवर्तक हैं श्री आचार्य रायप्रोलु सुब्बाराव। इनका तृणकंकण काव्य एक क्रांतिकारी चेतना को प्रदर्शित करता है। असमें अमलिन शृंगार की भावना अधिक प्रस्फुटित हुई है। तिरुपति वेंकट कवि द्वय के युग में ही इन्होंने अपनी कविता का श्रीगणेश किया था। महाकवि गुरजाडा अप्पा-रावजी के समान इन्होंने जनमानस को अपनी ओर आकर्षित कर लिया।

तृणकंकण के अनुवादक है बहुभाषाभाषी पंडित श्री मंगपेट राचोटी शंकरय्या शास्त्री जी। इन्होंने आचार्य जी के हृदय को भलीभाँति समझ-कर इनकी ध्वनि प्रधानता को व्यंजित किया है। तुलनात्मक अध्ययन के लिए इनका अनुवाद बहुत ही सहायक सिद्ध होगा। इनकी शैली सरल एवं बोधगम्य है। एतदर्थ मैं उन्हें साधुवाद एवं बधाई देता हूं।

डा० दाशरथि
आस्थान कवि (राजकवि)
हैदराबाद–500 001

Dr Rayaprolu Subbarao is one of the pioneers of modern Telugu poetry His Poems are Well-Known to all Telugu people interested in literature. 'Thrinakankana' is one of his best poems with a short story with a romantic theme. He has depicted in many of his poems 'Amalina Sringar' which is not at all sexual. The name 'Thrinakankana' is quite meningful as the hero puts a kankana, a brecelet made of grass around the wrist of the heroine as a token of pure love. SriMangampet ShankaraiahSastry garu has translated all the verses of the Thrinakankana into Hindi in the form of blank verse I am of the opinion that he could bring out the force and the beauty of the original poems in the translation.

Many poems and works written in Hindi have been translated into Telugu but very few Telugu works have been translated into other languages

There are brilliant writers in Telugu even in the modern age who await such translations in other languages so that the people of other languages may be able to appreciate the richness and the excellence of modern Telugu poetry Sri Sastry has made a good beginning and I hope his translation of this story would encourage others to attempt the same. The excellent poems will enthuse the readers, the desire to know more and more of Telugu and its literature I wish every success to Sastry's endeavour and hope he will translate into Hindi more such best poetic works of Telugu

--Dr Divakarla Venkatavadhani
Rtd Prof and Head Department
of Telugu Osmania University
Hyderabad-500007

GOVERENMENT CITY COLLEGE
HYDERABAD 500002.

Principle
N. Krishnamurthy

Date : 6-3-1980

Shri Rayaprolu Subbarao's book 'THRINA KANKANAM" is one of the best Telugu poems rich in romanticism and story sans sex This is one of the poems which richly deserves a national audience of reading public. Hindi being the accepted 'Lingua Franca' of our country. Shri Sastri Ji has rightly thought it fit to Translate this poem into Hindi and in doing so he has greatly succeeded in preserving all the richness and beauty of the original It is an irony that while literary contributions in Hindi are being translated into other languages those in Telugu have failed to attract such translations and Shri Sastriji richly deserves congratulations for this commendable effort. In one effort he has rendered signal service to both languages Hindi and Telugu through his lucid and facile pen He preeminently deserves recognition and encouragement

(N. KRISHNAMURTHY)
Principal

॥ श्री हरि. ॥

'तृणकंकण'

महाकाव्य, काव्य, खण्डकाव्य और तदन्तर्गत रीति काव्य, दूतकाव्य आदि की परम्परा बहुत प्राचीन है। विश्व की प्राचीनतम, अपितु अनादि, अनन्त, ब्रह्म नि श्व- सित, वेदवाणी और तदनुस्यूत संविद को साकार स्वरूप देनेवाली देववाणी में, यह परम्परा चिरकाल से पालित पोषित है। भारतवर्ष की अन्यान्य राष्ट्रभाषाओ मे एवं विश्व- की अन्य इग्लिश आदि में यह परम्परा उतनी प्राचीन है जितना कि काल प्रगति. उनके समृद्ध और सरस साहित्य सुधा सकलित होने मे हुई है। अतएव उस्मानिया विश्व विद्यालय एव तिरुपति के तेलुगु विभाग के भूतपूर्व अध्यक्ष श्री रायप्रोलु सुब्बाराव की 'तृणकंकण' नामक कृति सुरभारती की गीत काव्य की पुरातन परम्परा का परिष्कृत रूप ही है। इसलिए कवीश्वरो की कविता कला पारम्परिक होने पर भी नैतिक वैलक्षण्य से ओतप्रोत होती है। 'प्रतिदिनमुदये नवनवम' की सदुक्ति ऐसी काव्य कला कृतियो की ही समुद्भूति है। तेलुगु भाषा परिज्ञान के अभाव मे मल रचना की रूचि अभिरुचिपूर्ण रसमयता एवं विप्रलम्भ शृंगार जनित, तन्मयता का आंशिक पता भी हमें न लगता यदि अनवादक श्री शकरय्या शास्त्री ने भारत भारती- भव्य भाल भूषित, हिन्दी रूपी हिन्दी दे मदुल मसृण मधुर मधुरस- मयी पदावली एव सहृदय हृदय सौख्य सार्थवाह, सूक्ति मुक्तावली प्रभा प्रवाह का सौष्ठव न भर दिया होता।

विषय का गाभीर्य और वैलक्षण्य, इस खण्ड काव्य को अजर अमर कर चुका है। सुना था कि 'विरहे तन्मय जगत्' संयोग में सस्मृति की विस्मृति भले ही हो जाय विश्व मन पर तो प्रेयान प्रेयसी में परस्पर ओतप्रोत रहता है। विरह की तन्मयता, विश्व की जागृति और जीवनी को प्रेमपात्र मे ओत-प्रोत ही नही अपितु अविना भाव से तद्रूप हो देखती है क्योंकि विरह मिलन, सयोग की तरह न शारीरिक है न मानसिक न शैक्षिक न आहकारिक अपितु वह अमित उन्नत होकर आत्मिक ही बन जाता है। अतएव यह खण्डकाव्य अपने विषय वैदुष्य सशक्त शृगार रस मौन मदिर मृदुमूर्ति और सहृदय हृदयाकर्षण स्फूर्ति के कारण सर्वथा स्तुत्य है। अनुवादक का मानस भी उसमे घुल-घलकर अतएव खुलकर अनुवाद कला कौशल की सीमा को छू सका है। मूल लेखक के लिए 'तस्मै परस्मै नम' और अनुवादक के लिए 'तस्मै समस्मै नमः' कहना भी अपूर्ण एव अपर्याप्त है। 'तृणककण' में तृण शब्द का प्रयोग अत्यत विलक्षण है। 'तृणवन्मन्यते जगत्' यह वाक्य परमात्म सुखानुभूति वेला मे, सिद्धो और साधको की गतिविधि का निस्पृह और निरश परिचय देता है। इस खण्ड काव्य का द्वन्द (जोडा) भी अपनी मूक मौन समस्त साधना मे इतना अस्त व्यस्त है कि कं-सुख के कण-कण प्रतिक्षण को तृण मानता हैं और आत्मसुख मे ही मस्त है। 'तृणककण' नाम की व्याख्या और अर्थ गाभीर्य की सवेदना मे कोश की यह सूक्ति काम देगी–",क ब्रह्माणि पुखऽम्बुनि"

—प० भीष्मदेवजी शास्त्री, साहित्य वाचस्पति

तेलुगु भाषा में छायावादी कविता युग को श्री आचार्य रायप्रोलु सुब्बाराव जी ने ही मार्ग दर्शन किया था। इसलिए यह आन्ध्र कविता पिता मह के नाम से अतीव प्रसिद्ध है। इन्होने तेलुगु कविता को एक नए रूप मे रग दिया है।

रायप्रोलु की रचनाओ में 'तृणकङ्कण' को एक नवीन विशेषता प्राप्त हा गयी है। इसकी रजत जयती के अवसर पर स्व. तल्लावज्झल शिव शकर शास्त्री जी ने उस काव्य की भूमिका में लिखा है कि यह आधुनिक कविता युग के लिए आदि ग्रथ है। इस पुस्तिका ने तेलुग कविता मे एक क्रान्तिकारी दृष्टि को अपना लिया था। नयी तेलुगु के इतिहासकार एवं समालोचको ने भी रायप्रोलु को वर्तमान युग के प्रवर्तक ही नही प्रत्युत सुधारक भी माना है।

तेलुगु कविता के सम्बन्ध मे लिखते समय उसके साहित्यिक वातावरण का दिग्दर्शन कराना भी आवश्यक जाना पडता है। स्व. वीरेश लिगम पतुलु ने तेलुगु को सुन्दर तथा रोचक शैली मे मनमोहक गद्य का निर्माण किया है। तिरुपति वेकट कविद्वय ने आशु कविता को गाव गाव में सुनाकर उसे जनमानस के समीप ले जाकर इससे नवीन जीवन नवीन उत्साह को सचारित किया है। उसी समय रायप्रोलु ने अपनी नयी कविता का श्री गणेश किया। राष्ट्रीयता, देश भक्ति तथा आन्ध्र प्रबोध के रूप मे अमलिन शृगार को प्रधानता देना उनकी अपनी विशेषता है। इस काव्य में दो ही दो व्यक्ति दृष्टिगोचर होते हैं। उन्होने बाल्य दशा मे परस्पर प्रेम सूत्र मे बन्धे रहने का वचन लिया था। पर समय पलटा खाता है। निर्मल प्रेम को दर्शाने हेतु ही नायक नायिका को 'तृणकङ्कण' पहनाता है। इस प्रकार काव्य मे लेखक ने प्राचीन कवियो की अपेक्षा नवीन मार्ग को अपनाया है। तेलुगु के शब्द सौन्दर्य को यदि निहारना हो तो रायप्रोलु की कविता ही पढनी चाहिए। ऐसी प्रतीति प्रसिद्ध हुई।

तेलुगु के वर्तमान काव्यो मे 'तृणकंकण' की अपनी महत्ता है। है। इस प्रकार के उत्कृष्ट काव्य 'तृणककण' को मंगपेट के राचोटी शंकर शास्त्री ने भारत वर्ष की राष्ट्रभाषा में काव्य रूपांतरित किया है। यह इनका बहुत ही सुन्दर तथा सराहनीय कार्य है। शास्त्री जी मेरे चिरकाल के मित्र है। वे इस कार्य के लिए सर्वथा योग्य हैं।

हिन्दी तृणककण को मैंने उनके मुख से ही सुना है। आनंद का अनुभव किया है। मूल रचना को हिन्दी में परिवर्तन करने के प्रयास में श्री शकर शास्त्री ने सारस्वतिक सफलता पायी है।

देवुलपल्लि रामानुज राव
भूतपूर्व (कायकारी) उप कुलपति
उस्मानिया विश्व विद्यालय

अध्यक्ष
आन्ध्र प्रदेश साहित्य अकादमी
तथा
आन्ध्र सारस्वत परिषद
हैदराबाद-(आं. प्र.) 500 001

श्री रायप्रोलु सुब्बारावजी तेलगू के विख्यात कवि है। तेलगु मे छायावादी ढग की कविता का सूत्रपात इन्होने ही किया-'तृणकंकण' की रचना करके। इस सुन्दर खण्ड काव्य को तेलुगु स हित्य प्रेमियो ने समुचित आदर किया। 'तृणकंकण' अपने काव्यगत उत्कर्ष के लिए तो प्रसिद्ध हुआ ही। उसका विशेष महत्व इसलिए भी है कि उसने तेलुगु कविता को एक नयी दिशा दी।

श्री मंगंपेट के राचोटी शंकर शास्त्री जी ने इस खण्ड काव्य का हिन्दी में अनुवाद करके एक प्रशंसनीय कार्य किया है। इससे हिन्दी काव्य प्रेमियो को न केवल एक सुन्दर रचना का रसास्वादन करने का अवसर मिलेगा, अपितु हिन्दी और तेलुगु साहित्यो के सम-कालीन विकास करने के लिए भी प्रेरणा मिलेगी। भारतीय साहित्यों के परस्पर आदान-प्रदान के अत्यावश्यक कार्य में भी यह अनुवाद सहायक सिद्ध होगा।

—डा० आर्येन्द्र शर्मा
भू० पू० प्राचार्य,
विश्वविद्यालयीय आर्टस् कालिज, आचार्य एवं अध्यक्ष
संस्कृत विभाग तथा दीन कला संकायन,
उ० वि० वि० हैदराबाद-(आं० प्र०) 500007

बड़ी प्रसन्नता की बात है कि श्री राचोटी शंकर शास्त्री ने श्रीमान आचार्य रायप्रोलु सुब्बारावजी के तेलुगु 'तृणकङ्कण' को हिन्दी में रूपान्तरित किया है। अनुवाद खूब बन बडा है। एतदर्थ उन्हे मेरे आशीष।

इनकी भाषा सरल तथा बोधगम्य है। इनकी शब्दावली भावो को संप्रेषण करने में अधिक सफल सिद्ध हुई है।

—शिरोमणि कप्पगंतुल लक्ष्मण शास्त्री,
भू० पू० उपनिदेशक, शिक्षा-विभाग,
आन्ध्र प्रदेश—हैदराबाद—500004

'तृणकङ्कण' आधुनिक दृष्टि का एक क्रान्तिकारी प्रयास है। श्री शंकरय्या शास्त्री ने इसका बडा सुन्दर अनुवाद हिन्दी में में प्रस्तुत किया है। अनुवाद मूल रचना के समान सुंदर बन पडा है।

–वि० कृष्णस्वामी अय्यंगार
रीडर
केन्द्रीय हिन्दी संस्थान (उ० प्र०)

।। स्वस्त्ययन ।।

अभिनव कविता 'तृणकंकण' उस्मानिया बिश्वविद्यालय के तेलुगु विभाग के भूतपूर्व आचार्य एव अध्यक्ष श्री रायप्रोलु सुब्बाराव जी की कृति है। यह खण्ड काव्यस्रष्टा की प्रिय रचनाओ मे से एक विशिष्ट रचना है जिसमें शाश्वत हरीनिमा से विभूषित पावन प्रणय की सारस्वतिक उपासना की गयी है।

रस सिद्ध कबि श्री रायप्रुलु सुब्बाराव जी अपनी रचनाओं के गौरव से अलकृत होकर प्रातः स्मरणीय एवं सार्वकालिक, कालजयी यश की प्रभा से आलोकित हैं। उनको इस रचना का विश्व समग्र भाषाओ मे अनुवाद होना चाहिए। 'तृणककण' किसी भी भाषा के साहित्य भाण्डार को उज्जवल बनाने में समर्थ है।

भारत की की सामर्थ्यवती रसवर्षिणी भाषाओ मे हिन्दी भारत माता के समग्र श्रेष्ठ अंगो का घन शृंगार करती है और अवशिष्ट

पूज्य अवयवो का भी समर्थनीय विरल प्रसाधन बनी हुई है। संस्कृत वाणी की पावन लीला भूमि पर इसका विकास हुआ है इसलिए इस भाषा का दायित्व भी अधिक व्यापक है।

परिणामत: 'तृणकंकण' का हिन्दी में अनुवाद होना आवश्यक था। चन्दबरदायी, भूषण, बिहारी, जायसी, रहीम, रसखान, देव, मतिराम, केशव, सेनापति, तुलसी, सूर, कबीर, मीरा, मैथिलीशरण गुप्त, पन्त, प्रसाद, निराला, महादेवी. दिनकर और रामकुमार वर्मा के समान अनेक समर्थ साधको के साधना क्षेत्र मे 'तृणककण' की पावन हरीतिमा का पहुँचना अत्यंत वांछनीय था। 'तृणककण' पहन कर हिन्दी का सौन्दर्य, उसका सौभाग्य चमक उठेगा इसमे दो मत हो ही नही सकते।

श्री आर० शकरय्या शास्त्री हिन्दी-तेलुगु के आन्तर भाषीय क्षेत्र के एक अच्छे साधक हैं। इनका भविष्य इस आदान-प्रदान के क्षेत्र में अत्यत उज्वल है। अनुवाद कला की आत्मा के प्रकाश को वे दिनोदिन प्रचुर मात्रा में प्राप्त करते चले जा रहे है। 'तृणककण' का सारस्वतिक रस गौरव इनके अनुवाद मे सुरक्षित एवं सुस्थापित है, यह अनुभव मेरे समान अतेलुगु सामर्थ्यवाले विद्यार्थी को भी हो रहा है।

श्री शंकरय्या ने 'तृणककण' की आत्मा को हृदयगम् किया है और उसके सम्पूर्ण सौन्दर्य एवं प्रकाश की हिन्दी मे अवतरणा का सफल प्रयत्न उन्होने किया है। मुझे यह अनुभव हो रहा है कि 'तृणककण' की कोमलता, सरसता, पावनता एवं समग्र शिल्प समृद्धि हिन्दी की इस सुन्दर छाया को प्राप्त हो गयी है। 'तृणककण' का

समग्र सजल सारस्वतिक गौरव हिन्दी के 'तृणकंकण' को प्राप्त हो गया है, ऐसा मेरा अनुमान है और विश्वास भी। हिन्दी का यह सजल 'तृणककण' वाणी का अनुपम शोभा शृंगार सिद्ध होगा यह मेरा विश्वास है। मैं श्रद्धेय श्री सुब्बाराव जी के चरणो में अपना प्रणाम अर्पित करके श्री शंकरय्या को उनकी इस सारस्वतिक सफलता के लिए हार्दिक साधुवाद एवं बधाई देता हूँ।

डॉ० रामनिरंजन पाण्डेय, एम० ए०, पी-एच० डी०
भूतपूर्व आचार्य एव अध्यक्ष, हिन्दी विभाग
उस्मानिया विश्व विद्यालय, हैदराबाद

श्री आचार्य रायप्रोलु सुब्बाराव की साहित्य पूर्ण भाषा का सौन्दर्य देखते ही बनता है। 'तृतकंकण' इस दृष्टि से उनकी प्रतिनिधि रचना है एव यह चरित्र प्रधान काव्य है। इसमें नायक नायिका का कथोपकथन मनमोहक है।

मगपेट शकर शास्त्रीजी ने इस खण्ड काव्य का अनुवाद हिन्दी में किया है। अनुवाद मे छायावाद का निर्वाह कठिन कार्य है किन्तु शास्त्रीजी ने इसे भली प्रकार से सम्पादित किया है।

आशा है, इस अनुवाद से हिन्दी कविता के पाठक लाभान्वित होगे और हिन्दी तथा तेलुगु के तत्कालीन साहित्य की तुलना में उन्हे इससे सहायता मिलेगी।

—ओमप्रकाश निर्मल

अत्यन्त हर्ष का विषय है कि श्री आर॰ शकरय्या शास्त्री जो मेरे कालेज के साथी तथा सक्षम प्राध्यापक है उन्होने 'तृणककण' नामक स्वतंत्र खण्ड काव्य को हिन्दी मे उलथा करके बडा ही अच्छा काम किया है। एतदर्थ उन्हे मेरा हार्दिक बधाई।

इस अनुवाद ने हिन्दी के विद्वनो को सहजता से अपनी ओर आकर्षित कर लिया है और साहित्यिक कार्य की श्रीवृद्धि भी की है। इस प्रकार के सराहनीय कार्य भावसाम्यता को प्रदर्शित करते है।

—डॉ० नटेशन, एम०ए०,एम०एस-सी०
प्राचार्य
गवर्नमेंट सिटी कालेज,
हैदराबाद–500 092

डा० महाकवि, अभिनव पोतना वानमामलाय वरदाचार्यूलु का कथन है कि अनुवाद का कार्य दोनो भाषाओ के लिए एक सेतु बनसकता है वह 'रसो वै सः स गुह्ये वायं लब्ध्वाऽऽनदी भवति' श्रुति के अनुसार यह ब्रह्म नद का स्वरूप प्रदर्शित करता है। रसानंद को ही ब्रह्मानंद कहा जाता है। तृणककण का अनुवाद हिन्दी मे रूपातरित हो कर मूल सा प्रतीत होने लगा है। अनुवाद का कार्य उतना सरल नही है जितना कि माना जाता है। एक सुकवि हो कविता के भाव को समझ कर अनुवाद का कार्य सुगमता से कर सकता है।

"आदान-प्रदान का कार्य बहुत कुछ होना शेष है। केन्द्र साहित्य अकादमी आदि संस्थाएँ इब प्रकार के साहित्यिक कार्य को बढावा दे रही

हैं । इसी दिशा मे ,तृणककण' का अनुवाद हुआ है । मूल के अनुरूप इस में अत्य प्रासालकार की छाया देखते ही बनती है । यह अनुवाद हिन्दी की शोभा है ।

—शिरामणो के० वी० अप्पलाचार्युलु,

गुम्मडिदला (मेदक)

तेलुगु के सुप्रसिद्ध रस सिद्ध कवि श्री सुब्बाराव की मूल तेलुगु कृति 'तृणककण' प्रेम और सरस रसधारा प्रवाहित करती है। पुरुष और नारी के प्रेमबध की शारीर-मानसिक क्रिया-प्रतिक्रिया की प्रक्रिया से गुजरते हुए यह कृति प्रकृति के रमणाय दृश्यो का अकन करती है और सरस हृदय के हर्ष-पुलक, आकर्षण-समर्पण की सम्मोहक कथा कहती है । भाव और भाषा दोनो मे ललित्य और वक्रोक्ति से सजी-बजी कविता-पक्तियाँ सरस प्रवाह मे ऐसे तैरती चली जाती हैं कि विमुग्ध श्रोता के अन्तर मे उल्लास सवेग तरगित हो जाता है । इन पक्तियो में बेधक उक्तियो का चोज और जीवनानुभूति का सहज स्पर्श पाठक/श्र ता को रसयुक्त ही नही करता जीवन के रहस स्थलो की पहचान भी कराता है ।

श्री प्रो० शास्त्री ने इस सरस-रमणीय काव्य का हिन्दी मे काव्य रूपातर करके दो भाषाओ के बीच प्रीति की नई डोर बाध दा है । श्री शास्त्री से उनके अनुवाद को सपूर्ण रूप मे सुनते हुए मैंने जिस भाव विभोरता का अनुभव किया । उसके आधार पर ही कह सकता हूँ कि हिन्दी को इस कृति के माध्यम से एक अन्यतम कृति का लाभ हुआ । इसे सुनते हुए मैं हिन्दो के महान कवि श्री सुमित्रानदन पत की 'ग्रथि' रचना की सरस स्मृति से भीग उठा । दोनो रचनाओ मे अनेक समताएँ

देखकर चित्त विस्मय विमुग्ध भी हुआ और भारत की आत्मा की पहचान करनेवाले कवियो के प्रति आश्वस्ति का भाव भी जागृत हुआ कि भाषा भेद के बाद भी अनन्य भाव उनकी पक्ति-पंक्ति मे विराजमान है।

श्री शास्त्री ने मूल रचना का बडा सहज-सरल अनुवाद प्रस्तुत किया है जो हृदय को छूता है और मूल कृति के आस्वाद मे सहायता करता है। मैं शास्त्री जी को इस सरस अनुवाद के लिए साधुवाद देता हूँ। मुझे विश्वास है हिन्दी जगत मे इक कार्य की प्रशसा और इसका योग्य आदर होगा।

डा० आनन्द प्रकाश दीक्षित
आचार्य तथा अध्यक्ष, हिन्दी विभाग,
पुणे विद्यापीठ, गणेशीखण्ड
पुणे-४११००७ (महाराष्ट्र)

भूमिका

श्रीभगपेट शकरय्या शास्त्री जी का काव्याभास केवल तेलुगु क्षेत्र के लिए गर्व की वस्तु नही है हिन्दी भाषी क्षेत्र के लिए भी गर्व की वस्तु है। उन्होने तेलुगु तथा हिन्दो काव्य भी समानांतर धाराओ का अनुशीलन भी किया है और तेलुगु 'तृणकंकण' काव्य का अनुवाद बड़े मनमोहक शैली से किया है। एतदर्थ मैं उन्हे अपनी ओर से इस सुन्दर कार्य के लिए बधाई देता हूँ।

आधुनिकता के तृतीय चरण के रूप में स्वच्छन्दतावादी काव्य धारा हिन्दी में छायावाद व रहस्यवाद के नाम से प्रवाहित हुई और तेलुगु में 'भाव कविता' को 'नयी कविता का' अभिधान किया जाता है। किन्तु इसको 'हिन्दी की नयी कविता' से अलग मानना चाहिए। कहने की आवश्यकता नही है कि इस दुस्तर कार्य को श्री शंकरय्या शास्त्रीजी ने बड़ी तल्लीनता के साथ हिन्दी में रूपान्तरित किया है। इसमें केवल शब्द ही रूपान्तरित होकर नही आये हैं बल्कि कविता की आत्मा भी हिन्दी में मुखर हो उठी है।

मुझे पूर्ण विश्वास है कि इस पुस्तक का हिन्दी में स्वागत होगा और यह भी कामना है कि लेखक भविष्य में भी इस प्रकार का कार्य करके तेलुगु भारतो विस्तृत परिप्रेक्ष्य प्रदान करेगा तथा हिन्दी भारती को भी समृद्ध करने में सहायक सिद्ध होगा।

—डा० चन्द्रभान रावत
आचार्य एव अध्यक्ष
हिन्दी पिभाग
हैदराबाद विश्वविद्यालय
गोल्डन थ्रेशोल्ड

होली
1981

तृण कंकण

अणु–अणु ब्रह्माण्ड में व्याप्त समान
मनोहर वागर्थ प्रणय–अभिराम
गुण गान करने वाले मधुरभाषी
भाषा सपूतो ! तुम्हें प्रणाम ।

शाश्वत होंगे नव– नव स्फुरण
काव्य कला स्थिर होगी लावण्य से
विश्वानंद रसैश्वर्य दायिनी
रस-मञ्जरी कविते ! तुम्हे प्रणाम ।

शशि विकसित श्रावण निशीथ में
दर्शा सौदामिनी को
तब प्रशान्त चित्त हो
मैं ने किया समर्पण
इस पद्य पुष्पाञ्जलि को
उस पवित्र प्रणय को

× × × ×

माता-पिता का वात्सल्य-मैत्री शरत सुगन्ध ।
मोतिया सा सुवासित-मित्र स्नेहसबध ॥
लोकप्रिय दाम्पत्य सौख्य-प्रेम सदृश अद्वैत ।
वर्द्धन होता प्रेम रस-सुधा-सागर समेत ॥

छालों से युत चरण द्वय प्रवाहित स्वेद वदनांचल से
टप-टप गिरे चिल-चिलाती धूप में पैदल एक युवती
स्रस्त सुन्दर अंचल संभाले इच्छित प्रणय से
चैत्रोत्सव हरीतिमा उपवन पथ पर चलती

कोमल नीबू के रंग से
उस पुष्प गन्धी का कोमल गात
पीला पड़ गया निदाध परिताप से
नहीं दिखाई देने वाला कोमल पात।

सुन्दर केतकी-गुच्छ समसौन्दर्य निखरता
कान्त काया उसकी बिना आभूषणों के
स्रस्त स्वेद मुक्ताहार गुच्छ सहज
सौन्दर्य को चारों ओर बिखेरता।

चौदह बसंतों के लावण्य को न खोने वाली
आयु की सुषमा ही उसकी काया को चमकाती
बाल्य दशा बीत गयी युवती का सौन्दर्य
प्रस्फुटित होने लगा काया ले उसकी।

नगर समीप मग रखती पग मंद मंद
बढ़ती जाती आगे, पीछे किसी के
यातायात का पता नहीं चलता
कारण क्या है ? जा रही वह कहां ?

धंसते रेत में पैरों को सम्हालती
लू से भयभीत दीर्घ श्वास निःश्वास से
झुलस कर शीतल हुए पद तल उसके
चलती जाती वह एक हरिण पुत्री सी ।

शीतल रसाल तरु छाये आस पास
पर वह वहां रुकने न पाती
चलती जाती वह राह अपनी
श्रमित व्यथित तथा संक्षोभित ।

सुन्दर सुमन सुवासित स्रस्त चीर
व्याप्त चुनटों को संभाल कर
संवारती नूपुरों को मंद-मंद बार-बार
पहुँची वह श्रांत शांत क्लांत वन प्रान्त पार ।

पश्चिम में समय प्रहर शेष सा प्रतीत हुआ
निदाघ शांत कुछ तब संध्या का
सौन्दर्य प्रसन्न सा पवन बहा
तब वह युवती विवश निवारने चली अपनी
स्वपालिता हरिणी के समीप वहां त्वरा ।

नूपुरों के ध्वनि-संकेतों को सुन उसके
निकट पहुँची हरिण-पुत्री तब लिये उसे
अपने शीतल स्वेद-जलयुत हस्तों से
सहलाती हुई कुछ मधुर वचन सुनाये ।

नयनांचल में नीर भरा क्यों ?
बहिन ! तुम रोती हो क्यों ?
कारण क्या ? कठोर कण्टकित वनों में
घूमती तो नहीं ? बचपन की चेष्टाओं से ।

हँसते हुए बोली मधुर वचनों में यौवना
नयन कोर से वात्सल्य बरसा
तृण परिमल से युत मुखड़े को
मोहिनी हरिणी के, चूम लिया ।

चलने की थकान अभी हुई दूर नहीं
भीगी साड़ी का अंचल हुआ शुष्क नही
हरिणी को देखते ही उसने पुचकार लिया
हा ! हा ! कितना मृदु आर्द्र है मन उसका ।

सुन्दर विशालाक्षी तरुणी
हरिणी को समझा–बुझा निज को
निहारनेवाली को अंगुली से
बुलाकर के साथ में ले
चली पूगी-फल वृक्ष के नीचे ।

फैली वल्लरियाँ चढ़ीं सहारों पर
बँध गया ठढ़क देनेवाला मँडवा
उसके समीप ही एक वृक्ष जीर्ण
झरना एक झरता, उसका मूल छूये ।

उस तरु की छाया में व्याप्त पर्यन्त
स्निग्ध सिकतातल आर्द्रता देता
धूप वर्षा में सुरक्षित तरु बढे
मृदुल–शिशु सुकुमारों से ।

तन से झरना तो झरता चला
पूर्वाभिमुख पथ सरिता
धृत सौन्दर्य से भूषित शाखा सुमनों की
जब एक सेतु बनी वह चली चली ।

कोमल नारिकेल गुच्छों से लदे
वृक्ष फूलों के गुच्छे झूमते
मृदु मधुर ध्वनि से बुलाने वाले
बंशी तरु चंदनवृक्ष भी वहाँ थे ।

प्रशान्त चित्त संध्या स्निग्ध थी
मंद शीतलता भी तत्र व्याप्त थी
पथ पर चलता प्रदोष पवन
धीरे धीरे प्रवाहित तरुणी पर ।

हरिणी के वचन मुग्ध मधुर
स्पर्शित पवन युवती लता निहार
झरनेवाला झरना तो झरा
पर किस चिन्ता ने उसे ग्रस्त किया ।

साड़ी के अंचल से मुँह के स्वेदकण पोंछती
हाथ फैला मुख पर पड़े केशों को संभालती
सान्निध्य विशाल नना से वह देखती
और कई प्रकारों से कुछ न कुछ सोचती।

अनामिका पर स्वर्ण अँगुलीयक की चमक दमक देख
सुन्दर अँगूठी मनोहर कोमल कमल नाल
स्फुट हस्त-बंध में लसित पीत कौशेय कंगन को
व्यथित किया नयन कोर ने उसे खींच।

वनिता का सौन्दर्य हर क्षण, भिन्न-भिन्न
इतने में पड़ा मृदुल दिखलायी
मूर्छित शिशु सम मूर्छित
चरणों को देखती हरिणी सायी।

अज्ञात विकार ने जब व्यथित किया
नि.श्वास छोड़ती सहनशीलता छोड़
छमछमाती सुरमई आंख पसार
उसके हृदय में कुछ सुना जैसा भान हुआ।

उस कमलाक्षी का सौन्दर्य
निखरने पर वह कुसुम-गात्री
शोभित अँगुली कानों पर धर
कंपित गति से सुना एक कंठ स्वर।

रुचिर वेणु रंध्रों में मिल श्रुतियों से
प्रवाहित लघु झरना ध्वनियों में दब कल-कल
बहने पर सुन पड़ा एक क्लान्त कण्ठ
गद्गद स्वर से अनुतप्त हृदय हो जैसे ।

हाय ! समय आशा को निराशा मे बदल कर
कष्ट देना चाहता विपत्तियों से घेर कर
वृंत को जब तूने ही तोड़ दिया
तब लता का ही अन्त क्यों न होगा ?

मम प्रिय सखी ? अनुरूपगुण लावण्य–
प्रतिमा ! प्रसन्न शीला ! नवनीत शिरीष
प्रणय सुकुमार हृदया हा ! हा !
प्राण धर कर कैसे जीवित रहूँगा ।

हे हृदय ! मुझे पहले फूलों पर आशा ही नहीं थी
किन्तु तूने तो चाहा केवल एक सुमन को
सहन किया ? किसी प्रकार मैंने चिर उत्कंठा को
कैसे सहूँ ? काल ने तो निराशा ही निश्चित की ।

भाव भीतर हृदय के दर्पण में कैसे ?
रम्य रूप अनुरक्त हो क्यों न अंकित करवाली
ललाट में ?

देती न प्रसन्नता व्यथा ही मिलती प्रसाद में
ग्रहण से प्रपीड़ित चन्द्रकला जैसे ।

यह क्रम है या अक्रम या परस्पर मनोविकार
भ्रम मे कुछ दिन मन्मथ की व्यथा से पीड़ित
उस मधुराक्षी की प्रीति को सहन किया
समय ने ही आशा को तोड़ दिया
प्राणों को ग्रस्त किया तड़पाया विष हा ! हा !
अब उस सखी का मधुर स्नेह कहाँ गया ?

विमल प्रेम अंकुरित हुआ तब से
प्रेम किया पवित्र रूप में उस वनिता से
अन्त में लग्न मनोरथ यह संतोषी ठहरा
किसलिए मन ! प्रपीड़ित मन्मथ स ।

प्रेममय अकलुष भाव भीतर,
इच्छित वस्तु प्राप्त होती नही,
मेरे प्रति शेष अंत मे अनुताप ही,
बचा उसका प्रणय स्मरण मात्र ही ।

ललित लावण्य ललना भरित सुषमा
हर स्थान पर मुझे दिखलायी पड़ती
आँखे मूँदने न मूँदने पर आते स्वप्न ही
दिन रात मे अभेद ही दिखलायी पड़ता ।

उस जगने वाली रात में तुम नवोढ़ा
प्रणय जागृति रक्तिमा नेत्रों में पाता
नींद जिस रात आती सुख ही पाता
स्वप्न की अवस्था में तुम्हें निकट पाता।

मोहनमय हृदय मृदुलमय स्नेह
तेरे लीलादान दोने में
मेरे प्रणयरूपी मधुकण विसर्जित
विरक्ति के आँसू टपकाये जैसे।

हे सखी ! कभी हमें निकट लाया
बचपन का स्नेह मुग्ध हो रहने का
ज्ञान नहीं, तब अर्ध मात्रात्मिका ध्वनि से भी
व्यंजित नहीं, अंकुरित कोमल स्निग्ध।

रसोदय मन, अब पछताने से लाभ हो क्या ?
नियति ही निर्मल प्रेम को तोडती
आशा भंग कठोर शस्त्रिकाओं का निश्चय ही
घायल शोकाकुल बनाता शुभ्र देही को।

प्रेम भिक्षा से शून्य बांझ
जुगुप्सा लोक में किन झूठे बन्धनों ने
बांध दिया तुझे छोड़ते नही प्राण मेरे।

वर्षा की बूंदों की दूर की आशाओं की
प्रतीक्षा में चातक की प्यास न बुझती
और उसे अत्यन्त मनोवेदना होती
दूध न देनेवाली गौओं के थनों समान
अंबर मेघों से आवृत हो जैसे
स्नेह धारा वर्तिका में न बहने से ।

सुन्दर दीपक भी दीप्यमान न होता
अब मिलता ही क्या ? दुःखी होने से
हा ! हा ! विधि ने मोह को वंचित किया ही
विफल मनोरथ यह और तुम मिलते ही क्यों ?
विक्षोभ ही क्यों ? इस प्रणय कृपण को
भावने ! शून्यता में प्राप्त किये जा शांति को ।

हृदय में कृशित इस वियोग को
दहन सुगन्ध करता भाग्य को हा ! हा !
विकास पतन आधार भूत इस जग में
निकृष्ट काया भार से भाराक्रांत करता ।

निज गुणलताएँ कुसुमित शोभित जान
मुसकाने वाला चाँदनी गेंद फेंक
अपनी मनोलीला निहार राग मधु समझ
ध्वनित शाखाएँ पुष्प-दुग्ध निचोड़तीं
अपने भावबन्ध मे लसित स्त्री ईहाओ की ।

दृष्टि के मोह में बद्ध
अपने प्रेम-भरे भावो से जनित नवीन
कलाओं की रीति में संज्ञाएँ दे आयु की।

अर्ध निमीलित निम्न नेत्रों से
जिन तिरछी निगाहो ने देखा न देखा
दीर्घ तीक्ष्ण दृष्टि में स्थिर त्वदीय
मोह छूटा नही मेरे मन से अयि प्रिये।

कहकर स्वगत विलापों से
विदग्ध हृदय से एक तरुण तन
मोहक मन एक युवक ने देखा
एक युवती को पार करती सीमा।

यौवन की सौंदर्य-गरिमा शरीर पर
व्याप्त कान्ति स्रस्त नलिनी-विभा को
स्मरण दिलाता सुरति की आसक्ति से
पीड़ित उसकी चितवन में
कौतूहल निष्कलंक मुख ही होता दृष्टिगं

इतने में वे दोनों एक दूसरे के
स्नेह से आकृष्ट
चार-पांच कदम इधर-उध
क्षण-भर में उत्कट नि

परस्पर आकर्षित एक दूसरे से आनन्द
लज्जा आशंकाओं में डूबे प्रसन्नता से
निमीलित नेत्रों को न उठा परस्पर
मुखों को न निहार
सहन असहन से दूर स्पर्शो से ।

आजन्म बद्ध बन्धुत्वमय स्नेह
शाश्वत मिलन आकांक्षा विशेष प्रेम
महदाशा भंग ताप उस
बाल युग्म को क्या करने
सृजन किया ऐसे विधि ने ।

इस प्रकार होंठ न हिला
दृष्टि उत्कण्ठा से पीड़ित शोषित
निश्चेष्टा परवेश हो कुछ देर
वही रुके रहे प्रतिमाओं की भांति ।

जब जागृत हुई उस तरुण की चेतना
तब उस तरुणी का सुन्दर वदन-
मृदुल ईक्षण से विलाप को
प्रिय वचनों में व्यंजित करते हुए उसने कहा ।

हैं सखी ! इन दिनो कुशल मंगल क्या ?
अनुकूल मनोहर पवन प्रवाहित क्या ?

समस्त मनःप्रिय क्या ? गद्‌गदित हो
कुछ पूछते हुए उसने कहा ।

अश्रु कणिकाओं से मलिन वह युवा
कौतुक भोग लालसायुत नेत्र तब
खुली हुई आँखों से भी न अलक्षित
वनिता का प्रेम उदय हुआ
नवोष्ण कलुषित कपोलों में ।

कुम्हलाये मुख कुण्ठित स्वर
प्राप्त निर्वेद भार
सम्मुख मित्र की
उत्कण्ठा को समझ
अति शोकाकुल हुई
अबला आँखे उठा ।

चाह को छोड़ नव चन्द्र चन्द्रिका
दृष्टि को न खो
कोमल अधर
पुतली यवनिका
को दबा दबा
तब प्रिय की ओर
मुख को मोड़ लिया ।

छलछलाता प्रेम अधखिला न खिला
त्यक्त्यात्यक्त प्रेमोचित लज्जा को
समय भार से व्यक्ति की प्रसन्न बुद्धि से
एक दूसरे पर विमर्श करती चली वह शीला।

सुन्दर विस्फारित नयनों से देख प्रिय को
मृदु वचनों में अन्तर्मन से बोली
अस्खलित प्रेम रहस्य सूत्र
विस्पष्ट बुद्धि से प्रवीण पवित्र हृदया।

सखियों का मनःप्रिय बन्धन
अखण्ड कहते सुना हमने कैसे ?
लिखवाया नहीं ? सहन किया
मुझे दुःखी बनाया
उचित क्या ? ऐ ! मित्रवर !

जिस माता ने दूध मलाई युत अन्न खिलाया
उसकी इच्छा को भी तूने दुतकार दिया
और सखी के प्रेम को विफल बनाया
हे सहचरी ! क्या प्यार का व्यवहार ऐसा ही होता !

बचपन से पवित्र रूप में पलकर
मेरे मनोगत प्राणों से बढ़कर

प्रणय के आद्यंत को इतना भी सोचा नहीं
प्रेमाधिक्य का क्या प्रतिफल यही।

न तजने वाली इच्छाएँ न खोनेवाला विच्छेद
भावों के परिचय से अबतक तृप्त हो
अतृप्त अभेद अनुरक्त बन्धनों को बढ़ा
किसलिए तोड़ने के प्रयास अब ऐ सुहृदवर।

इस प्रकार प्रेम च्युत भावनाओं से
ओतप्रोत मन्द स्वर में कहा उस युवती ने
उसके कानन-चारी लोचन भर गये
अतुलनीय सलिलों से।

मिश्रित गाढ़ प्रेम आकांक्षाओ को बढ़ा बढ़ा
दिनरात अभिलषित प्रेमैक्य का अन्त में
सर्वनाश हुआ इस मिले-जोडे में
सखी का कण्ठ उद्भासित हुआ
प्रदोष-पवन प्रवाहित हुआ
उसी क्षण उसके शोकाकुल मन ने इस प्रकार कहा।

मेरी प्रिय सखी! स्नेह से युत मन ही द्रवित होता
दीर्घ आशा से रंजित अंकुरित प्यार की उस दशा
की मिठास को क्या कहूँ? टूटे हुए पंखों से च्युत सुमन
समान मैत्री की स्थिति क्या होगी इस जग में ?

हे बाले ! क्यों मुझे बातें सुना विषण्ण करती हो
वृथा लीला भ्रांति न समझ व्यथा से विह्वल
आखिर बस है प्रिया की स्नेह्–रीति मधुरिमा
वाही विद्यार्थी ही बन
काल और वय को बिताऊँगा सुख-शांति से ।

सरस परस्पर संबंध को जोड़नेवाले, अभेद अनुराग से
स्थिर रूप में स्थापित प्रणयबद्ध स्थिरता को प्राप्त कर
अंत में दैव के निष्ठुर विच्छेद के आक्रमण से–
अलगाव को सहन कर
किस कठोर हृदय से बिता सकता इस विष के
सम समय को सखी ।

न छूटने वाली यह आकांक्षा, शुष्क अंकुर स्नेह को बद
त्वदीय हृदय कुपित पीड़ाओं को प्राप्त प्रेम
बिखरे शून्य-भाव, छो ! रुचते नहीं अनुरक्ति बिना,
हे मुग्धे ! वियोग के समय सुधा और विष समान ही

झगड़ा न कर एक थाली में खा
मन में स्थित ममता को दबा-बढ़ा
प्रेमियों को यदि चाहे अलग करने
प्रेम दलित सृष्टि दैविक नहीं ।

प्रियतम वस्तु की सम्प्राप्ति से
प्राणी को आनन्द मिलता, उस पर
प्रशान्ति मिलती, जीवन शून्य जीवन को
तन्मय विकास नही, आमोद सुख भी।

हमारे कोमल हृदयों में भरित प्रणय
रसोदय अनुचित जान पड़े तो
सीप में मोती जन्मना आश्चर्य हो तो
पद्म में मधु उपजना पाप हो तो।

आयु पर्यन्त काल प्रदत्त
भाग्य को भुगतना ही पडेगा
अबले! विधि वितरित नियमों को
दुःख हो, सुख हो, अनुभव योग्य ही कुछ और नही।

उदय श्री की अरुणाई समीप शोभा
सुन्दर मोतियों की माला तुषार वृन्द शोभती
सांध्य कान्ता वियोग अश्रुकण ही
परिवर्तन को न जानती सृष्टि रहस्य सरणी।

विगत कालुष्य मुदित हो जगत छोढ
समय गति अपनी सुषमा को कही छिपा
'शारद, शशांक, विशद, निशांतो मे'
तुहिनहार आंसू बहाता नही क्या जलधर सखी।

मोहन वसन्त को आमोद सरसता
मसृण मुग्ध पीत आम्र-पत्र
हिमकुमार अनुरक्ति को मलिन
नहीं करता क्या ? प्रणयिनि !
चपल चित्त काल का क्या यही नियम होता ? ।

सरस सांगत्य सुखोन्नति की अपेक्षा
दुस्सह वियोग ही मधुर सहेली !
कष्ट बिना सुख रूचता नहीं
जैसे अन्धकार के बिना दीपक न शोभता ।

प्रेम च्युत यति के भावों में लीन
पुष्पोद्यानों में स्थित पूर्ण चन्द्र
चन्द्रिकाएँ प्रकाशतीं आकांक्षा से मुक्त
हृदय प्रसन्न लालित्य हो आमोद न पाता ।

आकांक्षा से पूर्ण वियोग की अवस्था में
सर्प को देख कर भ्रमित होता सखियों के कण्ठ
का पुष्प हार समझ, पुष्प हार को देख
कालपाश समझता आकांक्षा के टूटने पर ।

विश्व में जन्मनेवाला प्रत्येक प्राणी प्रेम कर एक को
संप्राप्त कर संसार के भोग विलास ऐश्वर्य को
हाय! फिर भी कभी सुख को प्राप्त करता कभी दुख को
ऐसे ही जीवन को सुख देने वाली मित्रता प्रशंसनीय
जैसे आषाढ की मेघावली आनंद देती दंपत्ति को ।

विनष्ट खण्डिकाओं को एक
सुकवि की प्राणप्रद गीतिका ही पर्याप्त
हे सखी ! विश्वास के अश्रु ही मुझे प्राप्त
नहीं कोई और आशा प्रणय-वल्लरी भी ।

भूलो न सहचरी ! प्रणय रम्यमय उन दिनों को
भूलो नहीं जीवन के अन्त तक उन प्रेमाश्रुओं को
भूलो मत मुग्ध अनुराग परिणाम प्राप्य विन्यासों को
भूलो नहीं इस कथा को, भूल जाओ समस्त शान्ति
के लिए ? ।

कथित अश्रुओं से युत निर्गत प्रणय विन्यास द्योतक
उस स्नेही के आनन को एक दृष्टि से देखकर
न देखे जैसा देख उस सुन्दरी ने कहा इस प्रकार प्रशान्त-
चित्त हो
निगूढ प्रेमलीला को नूतन रीति से स्पष्ट प्रदर्शित
करती हुई ।

उचित ही क्या प्रिय मित्र वर !
प्रेम से विह्वल प्रेम-सूत्र टूटता नही
चाहे तोड़ने के लिए कितना ही प्रयास करे
बच सकते क्या मिथ्या भ्रमवश हो ।

दैवी सुकृति बिना इस अवनी पर
युगल प्रेमोदय असंगत ही
उसमें अस्खलित प्रणयानुरक्ति
चिर तपःशुद्धि से ही प्राप्त होती

प्राप्त कर प्राणी नृत्य करता प्रेम के आक्रमण समय
इंद्रियों को तृप्त करने, कौतुक मालिन्य हो
तत्र, कर्तव्य के बन्धन खींच-खींच
सन्तानोन्मुख हो भूत रति में बन्द प्रेम रति से
वचित होना ज्ञात नहीं क्या प्रिये !

विषय की सुखेच्छाओ से तृप्त होता विह्वल मन
कलमषहीन रहने निष्कलक मृदुचेष्टा साधन से
मनो विषम गति को प्रवर्तित करना ही विवेक
तन्मय युक्त आर्द्र मानवोचित दशा ही
कृतार्थ करती, कवि की सुमधुर वाणी प्रिय-वर्षिणी ।

चैत्र पल्लव पुज सम उपजता
हेमंत के आगमन से अन्त होता
शिशु अवस्था में जनित पूर्ण-प्रेम
प्रकाशहीन हो शिथिल होता जराक्रांत समय ।

सागर की तरगे क्या निश्चल सखे !
सन्ध्या समय की ललाई शाश्वत क्या ?
भग्न मनोरथ एक स्थान दुस्सह विकार कही
छूटता वह कैसे कहाँ सुहृद् ?

प्रेम अंकुरित वय से बढ़ता
अधिक सम्मोहित करता सत्य, पर
अचिर काल में शिथिल होना उसकी विधि
अस्खलित वृत्ति के लिए कारण क्या ?

मिलने मात्र से प्रेमपूर्ण नहीं हो सकता सखे !
अन्तरों को जोड़ता अपूर्व शृंखला स्नेह ही
तदस्खलित समस्त साधन
ज्ञान विदग्धों को मात्र ही
किसी ललना के प्रेम-परिपाक को
क्या तुम ऐसे ही ज़ोड़ते ?

परम धर्मार्थ यह दाम्पत्यभक्ति
स्तन्य मोहन यह वात्सल्यशक्ति
साक्षी मात्र ही सुन्दर सख्य सक्ति
उनके आदिम प्रेम से ही मुक्ति ।

मोह रूपी सुमनों की शृंखलाएँ बांधती वन्य कपोतों की जोड़ी
निर्मल वात्सल्य में भरती गोवत्स की ममता
कल्मषहीन स्वच्छ प्रणय की आकांक्षाएँ जोड़ती मित्रता
यही रहस्य प्रदर्शित होता इस सृष्टि के विलास में ।

मन से वाणी से
कलुषित होगी इस पृथ्वी में
प्रेम की लीलाएँ
तप से, सहन से, ध्यान में
रत होने पर भी प्रेम ऐक्य
को प्रदान करता

शांति प्रेम और मधुर रसो का सौन्दर्य राग मनोहर
स्वान्त रूपी दोने में स्खलित हो जीवित रहता
भेदभाव के बढ जाने से प्रिय का प्रणय अन्त न होता
विश्रान्ति की अपेक्षा, प्रेम का सयोग-वियोग साध्य क्या ?

काम बिना मिलन सुख से पनपता लता-सुमन समान
उद्यानों में वह एक दूसरे से विलग नही हो पाता
किसी प्रकार
प्रेम के तपः फल को काटने के लिए ससिद्ध हुई क्या
प्रणयिनि !
क्यों चिर प्रणययुत वृन्त को तोड़ने के ये पाप कर्म ?

नींबू के वृक्ष की कोमल शाखाओं के मण्डपो के नीचे
पुस्तकों की मंजूषाओ की मेरे हस्त मुद्रित
चित्रो के सूत्र मे स्थित था अब तक
प्रेम अपना, मेरे प्रणय-मोहन

चिर आकांक्षा से युत मोहित मन को मुग्ध करने वाला
स्नेह-पुण्य को प्राप्त करता क्या स्वप्नों में भी
लीला सदृश भ्रम इस तरह वेधित करता
पुत्रों से विच्छेद प्रेमपूर्ण दशा क्या होगी ? निश्चय ही
सुहृद्वर्य ।

मोह ही रहस्य, उसकी विफल दशा ही
निगूढ उसके अर्थ ही गोप्य
ये विद्वानों के अनुभव वेद्य
अब प्रेम की समीक्षा ही क्यों सखे ?

आँख से आँख मिलाकर रहने की अपेक्षा
मन में विकारहीन हो, जीवित रहने की अपेक्षा
चाह से 'क्या भैया !' कह कर पुकारने की अपेक्षा
सखियों को और क्या चाहिए इस लोक में ऐ मित्रवर !

भावबन्ध को मणिबन्ध में तुमने
पहले बाँधा इस कौशेय कंगन को
खोलते हो क्या ? अब उसे बतलाओ,
आँखों में आँसू भर आने पर वह कुछ बोल न सकी ।

आँख झुका, निर्मल मुख को निम्न किये
स्पृहा निश्चेष्टायुत साध्वी को वह

स्वच्छ प्रेम से छूकर के अपने हाथों से
कहने के लिए तब उद्यत हो पर कह न सका ।

भुजाओं से फिसलने वाले उत्तरीय को
कुछ हटा तंग कगनों के कर
सौन्दर्य नेत्र-युग्म की आड में बढा
वृक्ष शाखा के सहारे खड़ी रही वह वनिता ।

हृदय के अगोचर उस कोमल कठिन
भिन्न-भिन्न गमन अस्पष्ट होते
हम क्या कह सकते उस अवर्णनीय
प्रेम की बहिरन्तर व्यवस्था को ।

खड़े हुए कुछ देर इस प्रकार
वे दोनो प्रेम में व्याकुल बाद में
सहयोगिनी के कर में कगन को
पहनाया उसने मन से निकास करने व्यथा को ।

समीप लवंग लतिका की तरंगों से परिपूर्ण
किशोर शाद्वल आक्रान्त पादप सिंचित
शीतल जल प्रवाह कुल्यान्त मे बढे
तोड़कर उस युवक ने एक विचित्र तृण-कंकण को
रचा आनन्द से ।

समीप लवंग कलिका की तरंगों से परिपूर्ण
किशोर शाद्वल आक्रान्त पादप सिंचित
शीतल जल प्रवाह कुल्यांत में बढ़े
उस कोमल आर्द्र तृण के अंकुर वृन्द को
तोड़कर उस युवक ने एक विचित्र तृणकंकण को
रक्षाबंधन के रूप में रचा आनन्द से।

मृदुल शोभित 'तृणकंकण' को
हाथ में धर उसपर नयनांचल को
दौड़ा प्रणयिनि ! हमारे मधुर चिह्न
देख यह कह हाथ में पहना दिया उसने।

पहनो, यह 'तृणकंकण' अयि प्रिये ! अपने मणिबंध में
बड़े प्रेम से जब कभी मेरा मृदुलमय स्नेह याद आये
प्राभातिक वेला में प्रणय अश्रुजल को छिड़क
किसी प्रकार वह कुम्हला न जाये पुष्पित रहे
यही मेरी अंतिम इच्छा है सहोदरी !

कहते हुए मुंह को मोड़ लिया उस ओर
अरुण किरण आशा को भूले सम
अमृतमति युवती अंगुली से प्रेम अंगुष्ठ को निकाल
प्रिय-मित्र के हाथ में अलंकृत करती चली।

मोह नाश, पर रहे प्रणय स्थिर
स्वप्न साथ मे भी न कलुषता
स्नेह रसास्वादन हो मृदु मधु
छाया सम हो मधुर एकता ।

तब भाग्य-देवता हाथ पसार
हर्षोल्लास से छिड़का अमृताक्षतों के समान
सुकुमार तरु अपनी शाखाओं से
बरसाया फूलो की वर्षा उन पर ।

वह मृदुपाणि शीला हा ! हा ! विधिवश छोड़
उस सुकुमार राग-सूत्र निचय का ध्येय न समझ
वीचिमय कुल्या को देख, वह मनस्विन उस
मनस्विनी को देखते चला, कुछ सोचते कहीं अदृश्य हो

कौशेय तोरण वृन्द पर स्थिर बद्ध
दृष्टि उतने मे सांध्य शोभा सदृश
लौटने पर एक दूसरे को निहारते
प्रस्थान किये वे धीरे-धीरे अपने घर ।

परिशुद्ध मृगमद पात्र समान
रहता जिसका परिमल अखण्ड
नियति नियम च्युत वर्द्धित उनकी
मैत्री का सूत्र सदा अभङ्ग ।

आचार्य डॉ सी. नारायण रेड्डी, उस्मानिया वि. वि तथा 'The Chairman of the official Language Commission, Government of Andhra Pradesh, Hyderabad.

आचार्य रायप्रोलु सुब्बाराव का नाम सुनते ही तेलुगु की भाव कविता के प्रथम चरण याद आते हैं। उधर गुरजाडा अप्पाराव हैं; इधर रायप्रोलु सुब्बाराव। वे अरुणोदय हैं; ये सूर्योदय।

तेलुगु की भाव कविता के प्रथम कवि हैं श्री रायप्रोलु सुब्बाराव। इसमें इन्होने प्रणय तत्त्व के साथ-साथ अमलिन शृंगार को भी भर दिया है। भाव कविता के लिए 'रम्यालोक' लक्षण ग्रंथ है तो 'तृणकंकण लक्ष्य ग्रंथ। बहुत से लोग अमलिन शृंगार' को 'Platonic love कहते हैं पर यह बात सच नही है। संयोगातीत ही अनन्य शृंगार है। इसके लिए यह छन्द उदाहरण के रूप मे है :—

तेलुगु मूल "कनुल नोडोहनन् जूचुकोनुट कन्न,
मनमु लन्योन्य रजन गोनुट कन्न
गोसरि 'येमोयि' यनि पिलचुकोनुट कन्न,
जेलुल किलमीद नेमि कावलयु मखुड !"

हिन्दी अनुवाद "आँख से आँख मिलाकर के रहने की अपेक्षा,
मन से विकारहीन हो जीवित रहने की अपेक्षा
चाह से क्या भैया' कहकर, बुलने की अपेक्षा
सखियों को और क्या चाहिए इस लोक में ऐ
मित्रवर !"

मंगंपेट राचोटी शंकरय्या शास्त्री मेरे चिरकाल के मित्र हैं। अच्छे अध्यापक हैं। हिन्दी के क्षेत्र में भी वे मजे हुए पंडित हैं। उपरोक्त छन्द उनकी अनूदित प्रतिभा की विशषता को प्रकट करता है। हिन्दी भाषा-भाषियों को तेलुगु के कवियों के बारे में परिचय कराने हेतु, कुछ वर्षो से इधर, जो कार्य चल रहा है उसी दिशा में यह रत्न चमक उठा है।

सितंबर 1981 'त्रिवेणी' अशोक नगर, हैदराबाद–500 020.